Historical Background of Yoga

Course - B.A./B.Sc. Yogic Studies

Paper - 1

Lesson presented by-

Dr. Prabhakar Devraj

Co-ordinator, Yogic Studies

E-mail - drpdevraj@gmail.com

प्रिय छात्रगण ,

इस पाठ में आप योग के इतिहास से परिचित होंगे, जो आपके सिलेबस का प्रारम्भिक अध्याय है। पाठ के अंत में सम्भावित प्रश्न भी दिए गए हैं, जिनका उत्तर सहजता से आप इसी पाठ के आधार पर तैयार कर सकते हैं। समस्या होने पर आप मेरे ईमेल पर सम्पर्क कर सकते हैं।

कुछ छात्रों ने, जो हिंदी में सहज नहीं हैं, अंग्रेज़ी भाषा में पाठ्य सामग्री की माँग की है। मैं उनकी इच्छा पूरी करने का यथासंभव प्रयत्न करूँगा ।

योग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

योग एक प्राचीन विद्या है , जिसका विकास भारतीय भू भाग में हुआ।भारतीय उप महाद्वीप की विशेषता थी कि यह प्रारम्भ से ही अत्यंत उर्वर तथा प्राकृतिक सम्पदा से समृद्ध क्षेत्र था। नदियाँ थी, झरने थे, वन सम्पदा थी, उपजाऊ भूमि थी। इस कारण जीने के लिए संघर्ष बहुत न्यून था। इसका फल हुआ कि बौद्धिक ज्ञान की ओर ध्यान देने का पर्याप्त अवसर मिला। ज्ञान तथा दर्शन की अनेक धाराएँ फूटीं। दर्शनशास्त्र की छ: प्रमुख मार्गों का विकास हुआ, जो षडदर्शन के नाम से जानी जाती हैं। उन्हीं में से एक योग भी था।

योग का विकास कब हुआ इसकी कोई तिथि नहीं बताई जा सकती। संभवतः सभ्यता के विकास के प्रारंभ से ही ऋषि मनीषियों ने अपने शरीर और मन पर शोध प्रारंभ कर दिए थे । इनका शोध-स्थल आधुनिक प्रयोगशालाओं के समान नहीं था । उस समय की परंपरा के अनुसार वह गृह त्याग कर दूर गुफाओं- कंदराओं में निवास करते थे । वहीं उन्होंने शरीर और मन को साधने के मार्ग खोजे । कालांतर में कई विधियां सामने आईं जिनमें मनुष्य का शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास की क्षमता थी । इस शोध का सबसे बड़ा परिणम ध्यान के रूप में आया, जो तनाव दूर करने में अत्यंत प्रभावशाली है । इस दृष्टि से इसके समान और कोई विधि पूरे संसार में उपलब्ध नहीं है ।

इस प्रकार योग एक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विज्ञान के रूप में प्रस्तुत हुआ । इसकी प्रासंगिकता कितनी है यह इस बात से स्पष्ट है कि आज पूरा विश्व योग के महत्व को स्वीकार करता है । मेडिकल साइंस में भी इस पर लगातार प्रयोग हो रहे हैं। बीमारियों की चिकित्सा में इसका प्रभाव उत्साहित करने वाला है ।

योग के इतिहास का अध्ययन हम मुख्यतः तीन काल-खण्डों के अंतर्गत कर सकते हैं :

1 प्राचीन काल

1.1 प्रागैतिहासिक काल

ऐतिहासिक सूत्रों से पता चलता है कि भारत में योग प्रागैतिहासिक काल से ही व्यवहार में था । जिस काल की हम चर्चा कर रहे हैं यह वह समय जब अपने विचारों को लिपिबद्ध करने का कोई साधन नहीं था। गुरु अपने शिष्यों को अपने ज्ञान और अनुभव का पाठ मुख से बोल कर देते थे जिसे शिष्य कंठस्थ कर लेता था । इस प्रकार यह ज्ञान अगली पीढ़ी तक पहुंचता था और अनवरत चलता रहता था । स्मरण पर आधारित होने के कारण यह कोई प्रामाणिक रूप नहीं था । अगली पीढ़ी को दिया जाने वाला ज्ञान गुरु के स्वयम् के अनुभव और स्मरण शक्ति से प्रभावित होता था ।

आगे चलकर वृक्ष के पत्तों तथा छालों पर पुस्तकें लिखी जाने लगीं । वे बहुत टिकाऊ नहीं थी और कम समय में ही आसानी से नष्ट हो जाती थी ।अतः उस काल के प्रमाण लिखित रूप में प्राप्त नहीं हैं । जो पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं उनसे पता चलता है कि योग का इतिहास लगभग 5000 साल पुराना है । ईसा पूर्व लगभग 2000 ईस्वी में योग प्रचलन में था । मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की सिंधु घाटी सभ्यता के मिले पुरातात्विक प्रमाण इस बात की ओर इंगित करते हैं कि उस समय मनुष्य आसन की विशेष मुद्राओं का अभ्यास करता था ।

अपनी आवश्यकता ओं के लिए मनुष्य पूर्णतः प्रकृति पर आश्रित था । उसका अनुभव था कि प्रकृति में उसके जीवन की हर आवश्यकता की पूर्ति करने की क्षमता है । ऊर्जा के लिए सूर्य, जल के लिए नदी, ठंड से बचने के लिए अग्नि, सांस के लिए प्राण वायु, चलने फिरने के लिए धरती एवं भोजन के लिए फल पेड़- पौधे और जानवर उसे उपलब्ध थे । जो भी उसे प्रकृति से प्राप्त हो सकता था उसका उपयोग करना उसने सीख लिया था ।

अनंतर मनुष्य के जीवन में पशुओं ने प्रवेश किया । पालतू जानवर जैसे गाय, बैल, घोड़े, कुत्ते आदि उसके जीवन के अंग बन गए। उसने जीवों के व्यवहार में कुछ विशेषता देखी । उनके व्यवहार का अनुकरण करना प्रारंभ किया । उनका अनुकरण कर यह पाया कि जीवों के बहुत सारे क्रियाकलाप और शारीरिक मुद्राएं मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हैं । इस प्रकार पशुओं की नकल से आसनों का प्रारंभ हुआ । सर्प से सर्पासन, बिल्ली से मार्जारी आसन, मोर से मयूरासन, कछुए से कूर्मासन आदि इसके उदाहरण हैं । गोरक्ष संहिता में यह कहा गया है कि संसार में जितने जीव जंतु हैं आसनों की संख्या भी उतनी ही है ।

इसके साथ ही मनुष्य की जिज्ञासा ने एक ऐसे तत्व की कल्पना करनी प्रारंभ कर दी जिसके द्वारा सृष्टि की रचना हुई हो । इस प्रकार ब्रह्म या परमात्मा की परिकल्पना ने जन्म लिया - एक ऐसी शक्ति जो पूरे विश्व तथा ब्रह्मांड में समान रूप से उपस्थित है और सब का नियंत्रण करती है । मन के भावों का भी मनुष्य ने अध्ययन किया । कुछ क्रियाकलापों से हमें शांति और आनंद मिलता है और कुछ क्रियाओं से कष्ट और दुख । इस प्रकार शरीर, मन, आत्मा और ब्रह्म का अस्तित्व प्रकट हुआ। आगे चलकर ऋषि-मनीषियों ने इस पर गहन विचार- मंथन किया । यह आध्यात्मिक चेतना का प्रारंभ था, जिसने भविष्य में मानव समाज के विचारों तथा व्यवहार को दिशा दी ।

ऋषियों ने, आज की भाषा में उन्हें शोधकर्ता कहा जाना चाहिए, ब्रह्म और आत्म तत्व पर घोर चिंतन किया। उनके चिंतन तथा प्रयोगों का निष्कर्ष अनेक रूपों में सामने आया। उन्होंने अनुभव किया कि प्रत्येक जीव में ब्रह्मांडीय चेतना का अंश है जिसे आत्मा कहते हैं।आत्मा अमर है और वह नश्वर शरीर में निवास करती है । ब्रह्मांडीय चेतना

परमात्मा का अंश है । जब शरीर की मृत्यु हो जाती है तो आत्मा एक शरीर से निकल कर दूसरा शरीर धारण कर लेती है । यह चक्र अनवरत चलता रहता है। जब आत्मा सभी प्रकार के कर्म बंधनों से पूरी तरह मुक्त हो जाती है तो शरीर धारण की प्रक्रिया समाप्त हो जाती है । इस तरह आत्मा, जो परमात्मा का ही अंश है, उस ब्रह्मांडीय चेतना में विलीन हो जाती है । आत्मा और परमात्मा का मिलन ही योग है । इसे ही मोक्ष कहते हैं ।

केवल योग ही वह विद्या है जो जीते जी आत्मा को परमात्मा (ब्रह्म) से मिलाने या मोक्ष प्राप्त करने का मार्ग बताती है । इसीलिए इसे ब्रम्हविद्या भी कहते हैं ।

योग का प्रथम गुरु या आदि गुरु शिव को माना जाता है । शिव का एक नाम पशुपति भी है । इसलिए उनके द्वारा बताए गए योग के मार्ग को 'पाशुपत योग' के नाम से भी जाना जाता है । शिव ने मनुष्य मात्र को आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक कष्टों से निवारण के लिए योग की शिक्षा दी । इस प्रकार योगविद्या का प्रारंभ करने वाले पहले गुरु शिव थे। आगे चलकर 10 वीं शताब्दी में नाथ संप्रदाय के योगियों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया । इसके प्रारम्भिक गुरुओं में दत्तात्रेय वशिष्ठ और विश्वामित्र प्रसिद्ध हुए।

1.2 वैदिक काल

वैदिक काल में योग प्रचलन में था । वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत एवं श्रीमद् भगवत् गीता आदि शास्त्रों में योग के विस्तृत उल्लेख मिलते हैं । ऋग्वेद में योग शब्द का उल्लेख जुड़ने या मिलने के अर्थ में किया गया है ।अथर्ववेद में प्राणवायु का वर्णन मिलता है। वैदिक दर्शनों में मनुष्य के इंद्रियों की तुलना घोड़ों से की गई है और यह बताया गया है कि इंद्रियों के नियंत्रण के लिए योग आवश्यक है । उपनिषदों के अनुसार ब्रह्म साक्षात्कार के लिए योग आवश्यक तत्व है ।आत्मा अथवा ब्रह्म का ज्ञान योग के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। कठोपनिषद, ध्यानबिंदु उपनिषद, मैत्रेई उपनिषद् आदि में योग का विस्तार से वर्णन आता है। इतना अवश्य पता चलता है कि उस काल में योग का ज्ञान तथा योग की साधना ऋषियों, संन्यासियों तथा उनके शिष्य साधकों तक ही सीमित थी । जनसामान्य को योग का विशेष ज्ञान नहीं था । वे योग को केवल साधु सन्यासियों

की विद्या मानते थे । इस कारण से योग के साथ अनेक किंबदंती तथा अंधविश्वास जुड़ गए। इसे जादू टोना तथा तंत्र मंत्र के समकक्ष समझा जाने लगा ।

पौराणिक ग्रंथों में योग का विस्तृत विवरण मिलता है। त्रेता युग में गुरु वशिष्ठ ने अयोध्या के राजा रामचंद्र को योग का अभ्यास करवाया था । द्वापर युग में कृष्ण ने अर्जुन को योग का ज्ञान दिया जो श्रीमद् भगवद्गीता में वर्णित है ।

2. मध्यकाल

2.1 महर्षि पतंजलि

योग का मध्यकाल महर्षि पतंजलि (400 BC) से शुरू होता है, जिन्होंने अपने पूर्व के योग के समस्त विछिन्न ज्ञान को समेट कर सूत्र -रूप में लिपिबद्ध किया । यह संकलन पातंजल योग सूत्र के नाम से प्रसिद्ध है । इसके पूर्व योग के अनेक रूप समाज में प्रचलित थे - हठयोग, भक्ति योग, ज्ञान योग, कर्म योग, मंत्र योग, कुंडलिनी योग, स्वर योग, लययोग आदि। जनसाधारण के लिए योग का यह विस्तृत रूप एक सागर के समान था जिसका कोई ओर-छोर नहीं था । संन्यासी और योगी तो अपना मार्ग ढूंढ लेते थे, परंतु सामान्यजन अपने गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियों को ढोते हुए, उसे समझने में बिल्कुल अक्षम थे ।इसलिए समाज में यह धारणा बहुत गहरी बैठी हुई थी कि योग केवल उनके लिए है जो समाज और परिवार छोड़कर संन्यासी हो जाएं। जंगल में चले जाएं और वहां तपस्या करें ।

महर्षि पतंजलि ने योग को सर्वसाधारण के लिए ग्राह्य बनाया । उनके द्वारा स्थापित मार्ग में संन्यास अथवा गृह- त्याग की आवश्यकता नहीं थी । सामान्य गृहस्थ भी योग का लाभ उठा सकें तथा योगाभ्यास कर योग की उच्चतम अवस्था समाधि तक पहुंच सकें,इसकी व्यवस्था महर्षि पतंजलि ने की । यह पातंजल योग सूत्र की सबसे महत्वपूर्ण और बड़ी उपलब्धि है । उन्होंने योग के आठ अंगों का प्रतिपादन किया, जो अष्टांग योग के नाम से प्रसिद्ध हैं । महर्षि पतंजलि का यह योग 'राजयोग' के नाम से विख्यात है । आज भी पूरे संसार में इसी पद्धति पर आधारित योग- शिक्षा दी जा रही है । यह इस

बात का प्रमाण है की पतंजलि की राजयोग की पद्धति विज्ञान की कसौटी पर खरी है, और इसीलिए आधुनिक वैज्ञानिक युग में भी स्वीकार्य है ।

2.2 नाथ सम्प्रदाय

10 वीं शताब्दी में नाथ संप्रदाय के गोरखनाथ ने भारत के सामा जिक और धार्मिक जीवन को नया मार्गदर्शन दिया, जिसमें ऊंच-नीच, कर्मकांड और पाखंड आदि का कोई स्थान नहीं था । नाथ संप्रदाय में नौ नाथ हुए । इसके पहले नाथ और प्रवर्तक स्वयं भगवान शिव थे । योग की उत्पत्ति शिव और पार्वती के संवाद से ही हुई । पार्वती ने शिव से प्रश्न किया - “यह संसार दुख में है । जो प्राणी संसार में जन्म लेता है उसे संघर्ष, क्लेश, दुख, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु आदि का सामना करना पड़ता है । क्या ऐसा कोई मार्ग है जिससे प्राणी इन विषम परिस्थितियों से अपने को मुक्त कर सुख शांति प्राप्त कर सके और परमार्थ करते हुए जीवन यात्रा को पूर्ण करे ?” इस प्रश्न के उत्तर में शिव ने पार्वती को योग की शिक्षा दी । शिव के अनुसार विश्व में तीन प्रकार के कष्ट हैं - आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक । इनसे छुटकारा पाने का मार्ग एक ही है और वह है योग । जिस समय शिव पार्वती को उपदेश कर रहे थे उस समय मत्स्येंद्रनाथ उसको सुन रहे थे । मत्स्येंद्रनाथ उसका अनुकरण कर परम सिद्ध योगी बन गये । मत्स्येंद्रनाथ ने योग का यह ज्ञान अपने शिष्य गोरखनाथ को दिया । योग का जो ज्ञान गोरखनाथ ने प्राप्त किया उसे 200 श्लोकों के रूप में संकलित किया । यह संकलन गोरक्ष संहिता के नाम से उपलब्ध है । यह हठयोग की एक प्रामाणिक पुस्तक है ।

गोरक्ष संहिता के में दो शतक हैं।इसमें योग के छः अंग बताए गए हैं - आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि । उस काल में योग केवल योगियों और सन्यासियों तक सीमित था । उनके लिए यम और नियम की साधना स्वयंसिद्ध थी। संभवत इसी कारण से महर्षि पतंजलि के इन दो प्रारंभिक चरणों को गुरु गोरखनाथ ने अपनी पद्धति में शामिल नहीं किया । आसनों के बारे में गुरु गोरखनाथ ने कहा है कि आश्रमों की संख्या 84 लाख है, परंतु उनमें से शिव जी ने केवल 84 आसनों का चयन किया क्योंकि सभी आसनों को करना संभव नहीं था। उनमें से भी उन्होंने 2 आसनों को मुख्य बताया है एक सिद्धासन और दूसरा कमल आसन या पद्मासन ।योगी गोरखनाथ ने

छः चक्र, सोलह आधार, दो लक्ष्य और पाँच आकाश बताए हैं । यह सारे उनतीस तत्व मनुष्य के शरीर में स्थित हैं । इन को जाने बिना योग में सिद्धि संभव नहीं है ।

2.3 योगी स्वात्माराम

इसी काल में योगी स्वात्माराम ने 'हठयोग प्रदीपिका' शास्त्र की रचना की जिसमें उन्होंने हठयोग के अभ्यास का सांगोपांग का वर्णन किया है । हठयोग के अनुसार सूर्य नाड़ी तथा चंद्र नाड़ी का संतुलन आवश्यक है। इसके बिना सुषुम्ना का जागरण सम्भव नहीं है। कुंडलिनी योग में सुषुम्ना जागरण एक आवश्यक चरण है।योगी स्वात्मा राम ने इस संतुलन के लिए आवश्यक सभी क्रियाओं का विस्तार से वर्णन 'हठयोग प्रदीपिका' में किया है।उनके अनुसार -

"जब तक प्राण का प्रवाह मध्य मार्ग सुषुम्ना से न हो, जब तक बिंदु को प्राण द्वारा स्थिर न किया जाय तथा जब तक ध्यान सहज न हो तब तक आध्यात्मिक आरोहन की बात करना मिथ्या प्रलाप है।"

प्राण पर नियंत्रण तथा ईड़ा और पिंगला के संतुलन के लिए उन्होंने समस्त विधियों की व्याख्या अत्यंत सूक्ष्म रूप में किया है।इसके अंतर्गत सबसे पहले शुद्धि के छः कर्मों का वर्णन है। इसके लिए अनेक आसन, प्राणायाम, मुद्राओं के अतिरिक्त नादयोग एवं लययोग का भी समावेश किया गया है।

2.4 महर्षि घेरंड

महर्षि घेरंड ने इसी काल में घेरंड संहिता की रचना की जो व्यावहारिक योग पर लिखा गया महत्वपूर्ण ग्रंथ है ।इसमें योग के सात अंग बताए गए हैं और सभी अंगों की विस्तार से चर्चा की गई है । महर्षि घेरंड हठयोगी थे । उन्होंने योग की क्रियाओं को 'सप्तांग योग' के नाम से वर्णित किया है । इसमें सबसे पहले शरीर को शुद्ध करने की व्यवस्था दी गई है। इसके अंतर्गत नेति, धौति, बस्ति, नौलि और कपालभाति की छः क्रियाएं आती हैं, जिन्हें हठ योग में षटकर्म कहते हैं । महर्षि घेरंड इन क्रियाओं को योग का पहला आयाम मानते हैं। उन्होंने शरीर को एक घड़ा माना है, इसलिए उनके द्वारा प्रस्तावित योग के स्वरूप को 'घटस्थ योग' कहते हैं । ईश्वर ने शरीर रूपी घट में इंद्रिय,

मन, बुद्धि, अहंकार सब भर दिया है । लेकिन घड़ा अगर कच्चा हो तो वह जल भरने पर नष्ट हो जाता है । यदि घड़े को पकाकर जल भरें तो वह न गलेगा और न नष्ट होगा । महर्षि के अनुसार शरीर को भी इसी प्रकार समझना चाहिए । इसे परिपक्व करने के लिए सबसे पहले योग की अग्नि की आवश्यकता होती है । योग की साधना से जो शक्ति उत्पन्न होती है वह अग्नि के रूप में शरीर के विकारों को दूर करती है और शरीर को पकाकर शुद्ध एवं मजबूत बनाती है । षटकर्मों के बाद उन्होंने आसन, प्राणायाम, बंध, मुद्रा आदि का विस्तृत विवरण दिया है। अंत में समाधि का वर्णन करते हुए उन्होंने समाधि के विभिन्न अंगों की विस्तृत व्याख्या दी है ।

3 आधुनिक काल

14 वी और 15 वीं शताब्दी में भक्ति योग विशेष रुप से प्रचलित हुआ । इस समय सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई और चैतन्य ने भक्ति संस्कृति का पुनरुत्थान किया । कबीर के ज्ञान मार्ग ने समाज को बहुत प्रभावित किया । हठयोग साधकों में 19वीं शताब्दी में प्रारंभिक नाम श्यामाचरण लाहिड़ी, परमहंस योगानंद, महर्षि रमण आदि का आता है । इसी काल में काली के भक्त तथा स्वामी विवेकानंद के गुरु रामकृष्ण परमहंस ने अपने आध्यात्मिक प्रभाव से समाज में उच्च स्थान प्राप्त किया । आज भी बंगाल में उन्हें पूजनीय माना जाता है । भक्ति योगियों में उनका स्थान बहुत ऊंचा है ।

इनके अतिरिक्त आधुनिक समय के कुछ निम्नलिखित योगाचार्यों ने योग द्वारा समाज की महत्वपूर्ण सेवा की है :

3.1 श्री थिरुमलाई कृष्णमाचार्य

श्री थिरुमलाई कृष्णमाचार्य वेदांत तथा भारतीय दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान थे । इन्हें आधुनिक योग का जनक कहा जाता है। 1924 से इन्होंने योग की शिक्षा देना प्रारंभ किया । ये योग के द्वारा चिकित्सा करने मे विख्यात थे। इस प्रकार योग चिकित्सा प्रारंभ करने का श्रेय इन्हीं को जाता है । योग में 'विन्यास' पर इन्होंने गहरा अध्ययन किया था ।

इनका कार्यक्षेत्र पहले मैसूर तथा बाद में चेन्नई रहा । 1888 में जन्मे श्री थिरुमलाई कृष्णमाचार्य का देहान्त सौ वर्ष की आयु मे 1989 में हुआ ।

3.2 स्वामी कुवल्यानन्द

स्वामी कुवल्यानन्द ने योग की शिक्षा परमहंस माधवदास से पायी । इन्होंने 1924 में कैवल्यधाम, लोनावला, महाराष्ट्र में योग शोध संस्थान की स्थापना की । सर्वप्रथम इन्होंने ही योग पर वैज्ञानिक शोध का प्रारंभ किया । इनके शिष्यों की संख्या बहुत बड़ी है , जो विदेशों में योग की पताका आज भी फहरा रहे हैं ।

3.3 स्वामी शिवानंद

इस सदी के चौथे दशक में योग का स्वरूप आज के संदर्भ से अलग था । उस समय योग को अपनाने या इसका समर्थन करने से इनकार किया जाता था क्योंकि एक सामान्य धारणा थी कि योग केवल त्यागी और संन्यासी लोगों के लिए है न कि समाज के लोगों के लिए। इसी समय स्वामी शिवानंद की परंपरा लोगों के सामने आई । वह पेशे से एक चिकित्सक थे । चिकित्सा सेवा से अवकाश लेने के बाद उन्होंने ऋषिकेश में सन् 1936 में 'डिवाइन लाइफ सोसाइटी' की स्थापना की । इसका मुख्य उद्देश्य था योग के द्वारा मानवता की सेवा करना तथा मेडिकल साइंस के क्षेत्र में योग् का यथोचित उपयोग करना ।उन्होंने योग के वैज्ञानिक स्वरूप को सामने रखा । इस कारण प्रबुद्ध समाजमें योग की विश्वसनीयता में अपूर्व वृद्धि हुई । धीरे-धीरे पूरे विश्व से लोग आकर जुड़ने लगे। स्वामी शिवानंद के अन्य शिष्य स्वामी विष्णु देवानंद, स्वामी वेंकटेश आनंद एवं स्वामी सच्चिदानंद ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया और योग के वैज्ञानिक स्वरूप को, जिसमें शारीरिक तथा मानसिक बीमारियों से छुटकारे का प्रबंध था, लोगों के समक्ष रखा ।

3.4 बीकेएस अय्यंगार

श्री थिरुमलाई कृष्णमाचार्य के शिष्य श्री बीकेएस अय्यंगार ने 1937 में पुणे में अपना आश्रम स्थापित किया । इनके द्वारा प्रतिपादित 'अय्यंगार योग' भारत के साथ ही

विदेशों में बहुत लोकप्रिय हुआ आज भी अय्यंगार योग के आश्रम बहुत बड़ी संख्या में संचालित हैं और योग की शिक्षा दे रहे हैं ।

3.5 स्वामी सत्यानंद सरस्वती- बिहार योग विद्यालय, मुंगेर

स्वामी शिवानंद के शिष्य स्वामी सत्यानंद सरस्वती ने गुरु की आज्ञा से बिहार के मुंगेर में 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की, जो मुंगेर आश्रम के नाम से विख्यात है । योग की सारी प्राचीन पद्धतियों के उपयोगी तत्वों के आधार पर उन्होंने अत्यंत वैज्ञानिक पद्धति का सूत्रपात किया जो 'सत्यानंद योग' या 'बिहार योग' के नाम से पूरे विश्व में जाना जाता है । इसकी मुख्य विशेषता इसका वैज्ञानिक स्वरूप है ।विज्ञान तथा अध्यात्म का जैसा समन्वय यहाँ मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। योग चिकित्सा के क्षेत्र में यहाँ महत्वपूर्ण अध्ययन तथा अनुसंधान हुए हैं और हो रहे हैं।

सम्प्रति स्वामी निरंजनानंद सरस्वती बिहार योग विद्यालय, मुंगेर के प्रधान आचार्य हैं । भारत सरकार ने वर्ष 2017 में इन्हें 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया है।

———

सम्भावित प्रश्न :

1. प्राचीन काल में योग के स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
2. योग की स्थापना में मध्यकाल के योगियों की भूमिका को रेखांकित कीजिए।
3. आधुनिक काल के प्रमुख योगियों का परिचय दीजिए।